■ पूर्णचन्द्र रथ

बिखरे सुर का मूल्य

'बिखरे सुर' गजरा कोट्टारी का हिन्दी में अनुवादित उपन्यास बगैर किसी हो हल्ले के गायक संगीतकार शंकर चांद के परिवार को केन्द्र में रख कर, जेनरेशन गैप, स्त्री-चेतना और स्त्री-मुक्ति जैसे मुद्दों को नये सिरे से बहस में लाने की कोशिश करता है। स्त्री अपनी रूढ़ीबद्ध चेतना के तहत परिवार की आर्थिक हालत सुधारने के उद्देश्य से स्वाधीनता यानी 1947 के बाद बंधन मुक्त हो रही थी। पर इसके पहले वह माता-पिता के विरोध के बावजूद अपनी पसंद के पुरुष से विवाह करने का हौसला भी अर्जित कर चुकी थी। जैसे कि उपन्यास की पात्र सुमिरन के चित्रण से लेखिका रेखांकित करती है। 'यह मेरी जिदंगी है और इसे मैं जैसा चाहे जीऊँ' वाला एहसास लेखिका के अनुसार मध्यवर्गीय परिवारों की स्त्री चेतना में तब प्रवेश पाता है जब दम मारो दम वाला 'हरे राम हरे कृष्ण' फिल्म का मशहूर गीत देश के गली कूचों में लगातार बजने लगता है। यानी उत्तर आधुनिकता की दहलीज पर खड़े पश्चिम के युवा अपनी हर तरह की निजी स्वेच्छाचारिता को जब हिप्पी बीटनिक संबोधन से उत्प्रेरित कर चुके थे, उस वक्त हिन्दुस्तान के मध्यवर्ग की युवा पीढ़ी आधुनिक (माडर्न) होने की फिलॉसफी के तहत अपने जीवन में उत्तर आधुनिकता के मूल्यों को उतार लेने की जुगत में थी।

यूं तो गजरा जी ने उपन्यास में ऐसा कुछ नहीं कहा है, लेकिन बीती सदी के सत्तर और अस्सी के दशक के बीच की अवधि में दिल्ली के मध्यवर्गीय परिवारों में तीव्रगति से हो रहे सामाजिक बदलाव को संकेतों से रेखांकित करते हुए उन्होंने लगभग यह जताने की सफल कोशिश की है कि किसी भी जातीय समाज में सांस्कृतिक बदलाव की जड़ें तभी गहरी और गंभीर हो जाती हैं, जब उन्हें मध्य और निम्न मध्यवर्ग की युवा पीढ़ी का समर्थन मिलता है। इसका एक आशय यह भी निकलता है कि सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया के दौरान मानवीयता बढ़ाने की बजाय सांस्कृतिक संविलियन से उभरा अपसंस्कृति का दानव सबसे पहले कमजोरों को ही दबोचता है।

गजरा कोट्टारी ने 'बिखरे सुर' उपन्यास का तानाबाना इसी सामाजिक पृष्ठभूमि पर बुना है। एक बात और, यह कि कितना ही बड़ा सर्जक

Scanned with CamScanner

या कलाकार क्यों न हो सबका पारिवारिक जीवन सफल नहीं होता। इसकी कई वजहें हैं। प्रमुख है, वे या तो पत्नी की उलाहना और सहयोग करने से इंकार की स्थिति से पीड़ित रहते हैं अथवा पुरुषदर्प से परिवार के प्रति अलगाव बनाए रखते हैं। इस प्रकार दो चेहरों के साथ बाहर ही नहीं घर में भी उपस्थित रहते हैं। गजरा कोट्टारी इसे संगीत मर्मज्ञ शंकर चांद और ख्यात इतिहासविद श्रीराम वारियार के माध्यम से, पारिवारिक बिखराव की स्थिति को-रेखांकित करती हैं और सवाल उठाती हैं कि पुरुष के चाल चलन को देखकर उस संदेह करने (निम्मो आंटी) की मानसिकता को बरकाकर, परिवार को टूटने से बचाने की खातिर स्त्री क्या खुद के सीने में समन्वय रुपी ज्वाला लेकर धधकती चुप रहेगी?

उपन्यास में बड़ी बेटी निशा का अपनी मां सिमरन को तिरष्कृत करने का जो कारण उभरा है वह यही है कि एक कलाकार की संवेदनशीलता की, उसकी पत्नी को कद्र करनी चाहिए। जबकि बंगलोर जाकर लौटने के पहले तक यही निशा, मां और छोटी बहन की हमदर्द और पिता के प्रति मर्यादित व्यवहार करती रही। यानी निशा उस दौरान एक आधुनिक सोच संपन्न पारंपरिक बेटी और बड़ी बहन की भूमिका का निर्वाहन कर रही थी। निशा के सुर तब बदलते हैं जब वह बैंगलोर से वापस लौटती है। पिता के प्रति उसका आदरभाव अपार सहानुभूति-सम्मान में बदल जाता है। लेकिन ज्यादा दिन टिकता नहीं। जब नियति यानी छोटी बहन घर के तनावपूर्ण माहौल और मनोवैज्ञानिक असर से पीड़ित अस्पताल पहुंच जाती है और वहां पर भी निशा अपने माता पिता को एक दूसरे से झगड़ते देखती है, तब वह कहती है- 'आप दोनों बस अपनी जरुरतों के बारे में सोचते हैं। मेरा बचपन तो आपने खराब कर दिया अब इस बच्ची को तो बख्श दो'। फिर वह नियति, जो उससे दस साल छोटी है, से कहती है- 'हमारे मां-बाप स्वार्थी हैं नियति। उनसे आशा करना बेकार है कि वे हमारा दुख समझेंगे।' (पृ. 101)

घटना छोटी है पर शंकर चांद परिवार के सुर यहीं से बिखरने लगते हैं- स्पष्ट रूप से। इसलिए कि उनकी बेटी मुंह पर उन्हे अपराधी कह रही है। मानवीय मर्यादा का तकाजा है जो किसी नैतिक शिक्षा की किताब में नहीं है।- कि बड़ों को कभी भी छोटों के सम्मुख अपराधी या दोषी की तरह नहीं, आदर्श के रूप में उपस्थित होना चाहिए। तभी उनका बड़प्पन बना रहेगा, घर की मर्यादा बनी रहेगी। उपन्यास में इसी के बाद से छोटों के सामने न बड़ों का बड़प्पन बचा रहता है, न घर की मर्यादा।

नियति बारह वर्ष की है और मां सुमिरन उसे शंकर चांद और अम्बिका जिसे शंकर चांद अपनी शिष्या बताते हैं, के संबंधों से त्रस्त, रोते हुए दुखड़ा सुना रही होती है। तभी बड़ी बेटी निशा कमरे में आकर चिल्ला कर कहती है- 'मम्मी नफरत हो रही है आपसे मुझे। आप अपनी छोटी से बच्ची जिसकी उम्र प्रभावशाली है के सामने ऐसी बातें कैसे कर सकती हैं। वो भी उसके बाप के बारे में... अपने खुद के पति के बारे में.. ? (पृष्ठ 110)

माता पिता जैसे सुर साधे रखने वाले मजबूत तारों के ढीले पड़ जाने के बाद उस निशा रूपी तार के कमजोर होने की बारी आती है। नियति यानी छोटी बहन उसे अपनी समझदार और शुभचाहने वाली दीदी मानती है तथा उसके 'मेरा बच्चा' कह कर संबोधित करने का बुरा नहीं मानती है। लेकिन जब उसे अपनी बड़ी बहन के इतर संबंध का पता चलता है, नियति विचलित हो जाती है। यह राज भी निशा ने नियति को खुद बताया था। न केवल बताया बल्कि विश्वास के साथ अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के बैंगलोर के इतिहासवेत्ता श्रीराम वारियार, जो उसके पिता की उम्र के हैं और जिन्हें भारत सरकार की ओर से दिल्ली में भी एक सुसज्जित बंगला मिला होता है, से ले जाकर मिलवाती है और गर्व के साथ खुद को

Scanned with CamScanner

उनकी दूसरी पत्नी (यानी उसकी मां सुमिरन की भाषा में रखैल) के रूप में अपना परिचय कराती है। यहीं से दीदी के प्रति उसका मोहभंग होता है। मतलब निशा दीदी के रूप में तनी हुई तार से सुर का परिवार के सुर से अलग होने का रहस्य या कमजोरी नियति समझ जाती है। उस वक्त वह यौवन की दहलीज पर होती है और पड़ौस के प्रकाश-निम्मो आंटी के बेटे चटख चंदन (चंदन चोपड़ा) जिसे कुछ साल पहले तक वह नफरत कर रही होती है, के प्रेम में पड़ चुकी होती है। चंदन के प्रति नियति के आकर्षण को निशा ताड़ चुकी होती है। दीदी और मां के नजरिए से निशा उसे प्रेम और प्रेम के दर्शन -आध्यात्म का मतलब भी समझाती है। लेकिन वारियर से मिलने के बाद चंदन के संदर्भ से ही नियति को निशा दीदी का सरंक्षण ढोंग सा लगता है और एक रात 'गुड़िया, मेरा बच्चा' कहते जब निशा उसे पुचकार रही होती है तब नियति कह उठती है 'मुझे बार बार मेरा बच्चा मत कहो। निशा अवाक हो उसे देखने लगी। उसका सहलाता हुआ हाथ रुक गया। ....दीदी, मेरी मां नीचे है। तुम मेरी दीदी हो, मां नहीं। प्लीज मुझे बार-बार बच्चा मत कहो। वह खुद ही हैरान हो गई कि इतना सब कहने का साहस उसमें आया कहां से।' (पृष्ठ 206)

जाहिर है नियति में यह साहस एक दूसरे के स्वार्थ (कमजोरी) को दबाए-छुपाए रखने की पेशबंदी और पिता की तरह वारियर से घृणा से उभरी मानसिकता से ही आया। परिस्थितियां ऐसी बनती हैं कि परिवार में दो धुरियां बन जाती हैं। शंकर चांद और दीदी तथा सुमिरन और नियति। एक छत के नीचे बिखरे बिखरे सुरों का संसार। तब कौन एक दूजे का दुख (वारियर का दीदी से दगा) और सुख (दीपावली के दिन सुमिरन और नियति के बिना खुशियां मनाना) समझेगा?

उपन्यास का अंत मार्मिक है। अंतिम स्टेज में गले का केंसर पता चलने पर शंकर चांद बिस्तर पकड़ लेते हैं। उनकी तीमारदारी मनोयोग से निशा और अंबिका बंद कमरे में करती हैं। सुमिरन और नियति का प्रवेश जहां वर्जित है। अंत में नियति और सुमिरन उस कमरे में जाने की हिम्मत करती हैं। निशा, नियति को पिता से मिलने देती है। फिर उसे मां और चंदन के खिलाफ भड़काती है। नियति यहां भी दीदी को रोक ठोक जवाब देती है। लेकिन जब सुमिरन जाती है, तो निशा दरवाजे पर ही उसका अपमान करती है। यहां तक कि शंकर चांद के अंतिम दर्शन के लिए रखे शव पर पुष्प चढ़ाने के समय भी निशा अपनी मां से सबके सामने बुरा बर्ताव करती है।

इस प्रभावी उपन्यास की खासियत है कि 1970 और 80 के दशक के बीच के दस वर्षों के कालखंड को केन्द्र में रखकर इसका तानाबाना इतनी खूबसूरती से बुना गया है, कि तेजी से विकसित हो रही दिल्ली जैस महानगर की आब ताब की बजाय यह अन्य शहरों के बड़ी कॉलोनियों के रहवासियों के आपसी व्यवहार, जिसमें बहुत कम लोग आपस में मेल मुलाकात संबंध रखते हैं, की थाह हम पा सकते हैं। उपन्यास में लेखिका इसके जरिए यह रेखांकित भी करना चाहती हैं कि समाज में (कालोनी) आपसी संबंधों की रिक्तता की वजह से, अकेला पड़ जाने के कारण भी मनुष्य अनेक प्रकार के मनोविकारों से ग्रस्त हो जाता है, जैसे कि सुमिरन। शंकर चांद तो शास्त्रीयता की अपनी जिद के कारण, अपनी बिरादरी ही नही परिवार से भी कट चुके थे। जबकि शास्त्रीयता का आग्रह भी प्रेम, माया, मोह जैसे गुणों के संदर्भ से मानव मन का विकार है। यानी शास्त्रीयता गतिशील परम्परा का एक पड़ाव है। इसको इसी रूप में ग्रहण करना चाहिए। वरना यही शास्त्रीयता उपन्यास के एक निर्जीव पात्र सुआ (पोकर) के रूप में जब तब उपस्थित होकर सक्रियता और परम्परा की गतिशीलता को अपनी मौजूदगी (विकार)से

Scanned with CamScanner

भयाक्रांत करता रहेगा।

दरअसल यह सुआ, घर में फालतू लेकिन समय पर बेहद उपयोगी जिन्स, कहें तो हमारे परिवार के तथाकथित 'सांस्कृतिक मूल्य' की तरह पड़ा रहता है। जिसका इस्तेमाल हम तभी करते हैं जब हमें इस प्रतीक के सहारे अपने ही अबल (खासकर महिलाओं और बच्चों) लोगों को आतंकित या आहत करना होता है, उनके व्यक्तिव के स्वाभाविक सरगम के विकास और अस्मिता पर आघात करना होता है, सुर तब यहीं से बिखरते हैं। व्यक्ति के -परिवार के। और गनीमत है आज के युवा (चंदन, नियति) सुआ और सुए के प्रतीक की हकीकत जान गए हैं। और जिसके भी हाथ में सुआ देखते हैं, निस्तेजकर, उस कमरे के दरवाजे की कुंडी लगा रहे हैं- 'सुए और अस्थिओं के साथ ही (इन्हें) जिंदगी बिताने दो', कहते हुए।

सोनल मित्रा ने उपन्यास का अच्छा अनुवाद किया है। खासकर उपन्यास के मार्मिक भावुक स्थलों के सटीक अनुवाद से प्रमाणित किया है कि हिन्दी शब्दों की सम्प्रेषणीयता किसी भाषा से कमतर नहीं है। प्रूफ की गलतियां अलबता खटकती हैं।

बिखरे सुर (उपन्यास)
गजरा कोट्टारी। संस्करण. 2011-मूल्य 199 रुपए
प्रकाशक-हार्पर हिन्दी (हार्पर कालिंस)
ए-53, सेक्टर-57, नोएडा-201301

Scanned with CamScanner